THE ECONOMIC TIMES

Date: 13-07-17

Rethinking old age to the benefit of all

ET Editorials

India has a young population with a median age of 27.6 years. Therefore, unlike in most developed countries and China, problems of the elderly, of the kind discussed in a recent survey of ageing by the Economist, are not a hot-button public policy issue. But that would ignore the higher proportion of the elderly in the southern states and among affluent sections elsewhere.While the under-14s account for 28% of India's population, about 66% are in the age group 15-65. That leaves 6% of the population who are 65-plus. The potential support ratio, the number of working age persons per senior citizen is thus 11, a far cry from Japan's 2.1. But, while the problem lacks urgency, this is the right time to act. By creating the National Pension System's architecture of funded pensions while the country is still young, India has chosen to avoid the problems that befall a pay-as-you-go system of pensions when the working population shrinks in relation to that of the elderly who do not work. Similar prudential action is required in other ageing fronts.To begin with, we must reconsider the manner in which we view the ageing population. Given increases in lifespan and the capacity to earn and spend that an increasing proportion of those above 60 retain, seniors could be differentiated into three categories: those who can still work, even if not at the same pace as a youngster, those who cease to work but still retain sufficient health to retain a zest for life and would spend liberally if they could insure care for the third phase of not being able to look after themselves.Such differentiation of the elderly is the key to opening up new markets for assorted products and services, spanning healthcare, obviously, skilling, entertainment and insurance and annuities.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 13-07-17

ई-नाम सुधार

संपादकीय

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस सप्ताह के आरंभ में एक सम्मेलन में राज्यों के मुख्य सचिवों को सलाह दी कि वे इलेक्ट्रॉनिक नैशनल एग्रीकल्चर बाजार (ई-नाम) पर ध्यान केंद्रित करें। यह सुझाव सही समय पर आया है क्योंकि किसानों को फसल का सही मूल्य सुनिश्चित करने में विपणन की अहम भूमिका है। ई-नाम का उद्देश्य है कृषि उपज के लिए देशव्यापी स्तर पर अबाध और पारदर्शी बाजार तैयार करना। परंतु जोरशोर से की गई शुरुआत के एक साल बाद भी यह अपने उद्देश्य प्राप्त करने में पूरी तरह नाकाम रहा। हालांकि देश की 585 प्रमुख मंडियों में से 400 से अधिक में ई-कारोबार की सुविधा है लेकिन पिछले साल बमुश्किल चार फीसदी थोक कृषि कारोबार ही इस माध्यम से हुआ।

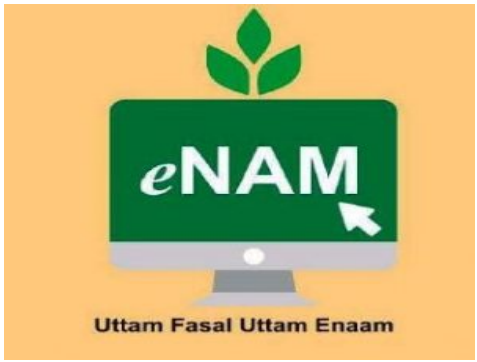

इस ई-कारोबार में से भी ज्यादातर या तो एक ही मंडी या फिर एक ही राज्य में हुआ। ऐसे में देखा जाए तो किसानों को बिक्री की खातिर देशव्यापी स्तर पर व्यापक खरीदार आधार मुहैया कराने का लक्ष्य हासिल नहीं हो सका।जाहिर सी बात है कि नई विपणन व्यवस्था को सुचारु बनाने के लिए काफी जमीनी काम करना बाकी है। यह काम न तो इसकी लॉन्चिंग के पहले किया गया, न ही अब किया जा रहा है। ई-नाम को कोई समांतर विपणन तंत्र नहीं होना था बल्कि इसे तो मौजूदा मंडियों की अधोसंरचना का ही लाभ उठाना था ताकि खरीदारों और विक्रेताओं को देशव्यापी कारोबार के लिए ई-प्लेटफार्म भर मुहैया करा दिया जाए। इसके कारोबारियों को एकल लाइसेंस की आवश्यकता होती है। बाजार शुल्क भी एकबारगी और कारोबार की गई वस्तुओं का देश भर में अबाध संचार। दुख की बात है कि अब तक इनमें से कोई शर्त पूरी नहीं हो सकी है। कुछ ही राज्य ऐसे हैं जिन्होंने कारोबारी लाइसेंस जारी किए हैं। वे भी राज्य के बाहर वैध नहीं हैं। राज्य की सभी मंडियों के शुल्क को सुसंगत बनाने की प्रक्रिया शुल्क के एकल संग्रहण की सुविधा की ओर पहला कदम है। यह भी अभी होना है। वस्तुओं की गुणवत्ता के आकलन की व्यवस्था और उनका समयबद्ध परिवहन तय करना भी अभी बाकी है। अधिक आधारभूत स्तर पर देखें तो राज्यों के कृषि उपज विपणन समिति (एपीएमसी) अधिनियमों में भी समुचित संशोधन नहीं किए गए हैं।

ऐसे में कृषि जिंसों के अंतरराज्यीय लेनदेन में समस्या आएगी। जिन कानूनों में संशोधन किया भी गया है वे निजी बाजारों को इजाजत दिला पाने में नाकाम रहे हैं। इसके अलावा उनकी बदौलत थोक खरीदारों या अंतिम उपभोक्ता तक पहुंच भी सुनिश्चित नहीं हो पा रही। बाजार शुल्क और बिचौलियों के कमीशन पर भी इससे जरूरी रोक नहीं लग पा रही।राज्यों ने पहले ही मंडी स्तर का बुनियादी ढांचा तैयार कर दिया है। ऐसे में ई-कारोबार के लिए सभी राज्यों के बाजारों को आपस में जोडऩे के मामले में कोई समय नहीं गंवाया जाना चाहिए। बाद में इनको अन्य राज्यों की मुख्य मंडियों से जोड़ा जाना चाहिए। एक सच्चा कृषि बाजार तभी आकार लेगा जब देश भर के प्रमुख उत्पादन और खपत केंद्रों की मंडियां एक इलेक्ट्रॉनिक प्लेटफॉर्म से जोड़ दी जाएंगी और उनमें कृषि जिंसों का कारोबार शुरू होगा। यह देखते हुए कि छोटे किसानों की छोटी-छोटी मात्रा वाली उपज को लेकर बड़े खरीदार रुचि नहीं दिखाएंगे, एकीकृत कारोबार की आवश्यकता होगी ताकि उत्पादकों की पसल को इकठ्ठा कर इनको ई-नाम मंच के जरिये बेचा जाए। इतना ही नहीं चूंकि इलेक्ट्रॉनिक कारोबार की व्यवस्था में भी स्पॉट ट्रेडिंग की निगरानी की कोई व्यवस्था नहीं है इसलिए सटोरियों को लेकर अतिशय समझदारी बरतनी होगी। जब तक इन मुद्दों से सही ढंग से नहीं निपटा जाता है तब तक ई-नाम किसानों को उनकी फसल का उचित मूल्य दिलाने में कामयाब नहीं हो सकेगी।

Date: 13-07-17

कृषि ऋण माफी की राह नहीं है आसान

कई राज्यों में कृषि ऋण माफी की घोषणाएं की गई हैं लेकिन इन पर अमल करने की राह में कई चुनौतियां हैं। जमीनी हकीकत से रूबरू करा रहे हैं नीलकंठ मिश्रा (लेखक क्रेडिट सुइस के इक्विटी रणनीतिकार-भारत हैं)

कृषि ऋण माफ करने के लिए मची चीख-पुकार शांत होने का नाम नहीं ले रही है। वैसे इन दिनों वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) को लेकर देश भर में मची उथलपुथल ने कर्ज माफी के मसले को पीछे धकेल दिया है। हमारा अब भी यही मानना है कि यह एक संरचनात्मक समस्या है। दरअसल कृषि उत्पादन बढऩे से आपूर्ति तो सुधरी है लेकिन प्रति व्यक्ति कैलोरी की मांग कम होने और जनसंख्या वृद्धि में गिरावट आने से खाद्य

पदार्थों की मांग में वृद्धि भी कम हुई है। हालांकि खाद्य प्रसंस्करण और कृषि निर्यात के जरिये इस क्षेत्र पर बने दबाव को कुछ हद तक कम किया जा सकता है लेकिन इसमें वक्त लगेगा।हालांकि राजनीतिक संगठनों ने इस पूरे मसले को किसान कर्ज माफी तक ही सीमित कर रखा है लेकिन कृषि क्षेत्र पर व्यापक तनाव को साफ महसूस किया जा सकता है। कृषि आय के विकास में पिछले तीन वर्षों में तीव्र गिरावट आई है जबकि उसके पहले एक दशक तक वृद्धि दर दो अंकों में रही थी। अब हालत यह है कि अच्छे मॉनसून से कृषि क्षेत्र में खुशनुमा अहसास पैदा होना भी कम हो गया है। पिछले साल कृषि उपज की ढीली कीमतों ने अधिक उत्पादन से मिली बढ़त को बराबर कर दिया था। इस साल भी मॉनसून अभी तक सामान्य से छह फीसदी अधिक सक्रिय दिख रहा है। इसका असर यह हुआ है कि खरीफ सत्र की फसलों की बुआई पिछले साल की तुलना में 19 फीसदी अधिक हुई है। वैसे पिछले साल मॉनसून थोड़ी देरी से सक्रिय हुआ था लिहाजा इस बार बुआई तुलनात्मक रूप से बढ़ी हुई लग रही है। इसके बावजूद ऐसा लगता है कि कृषि उत्पादों की कीमतों में गिरावट होने का भी बुआई के रकबे पर कोई असर नहीं पड़ेगा।

हालांकि इस साल भी सामान्य मॉनसून होने से कृषि उपज की आपूर्ति अधिक रहने की समस्या रह सकती है जो कृषि क्षेत्र के समक्ष मौजूद संरचनात्मक मसलों को ही रेखांकित करती है। ऐसे में आने वाले एक साल में जिन राज्यों में विधानसभा चुनाव होने वाले हैं वहां पर किसानों का कर्ज माफ करने की मांग फिर से उठ सकती है। कृषि ऋण माफी के फैसले पर अब सवाल उठाना तो निरर्थक है लेकिन इसके असर का विश्लेषण करना फायदेमंद हो सकता है।

कृषि ऋण माफी के साथ परेशानी यह है कि इनका ऐलान तुलनात्मक रूप से जितना आसान है उस पर अमल कर पाना उतना ही कठिन है। चुनौती केवल राजकोषीय फंड के इंतजाम की ही नहीं है। कुछ राज्यों में किसान कर्ज माफी के फैसले की रुपरेखा पेश की गई है लेकिन इन पर अमल तभी हो सकता है जब बैंकों को हरेक कर्जदार किसान के कर्ज से संबंधित विवरण पहुंचाए जाएं। इसका मतलब है कि कई गैर-मामूली सवालों के जवाब भी देने होंगे, जैसे कि क्या कर्ज माफी किसी खास फसल से संबंधित होनी चाहिए, क्या सिंचाई की सुविधा वाले खेतों के किसानों को कम माफी मिलनी चाहिए, क्या खुद खेती नहीं करने वाले भू-स्वामियों को कोई राहत नहीं मिलनी चाहिए और क्या बंटाई पर खेती करने वाले किसानों को अधिक लाभ मिलना चाहिए?सवाल यह है कि कर्ज माफी की मात्रा कितनी होनी चाहिए और इस फैसले को किस तरह लागू किया जाए? हमारी समझ है कि किसानों के कर्ज के आंकड़े कुछ खास फसलों से संबंधित नहीं हैं, बंटाई पर खेती करने वाले किसानों की भी सही जानकारी मिल पाना मुश्किल है और सिंचित खेती के आंकड़े भी अद्यतन नहीं हैं। ऐसे में राज्य सरकारों को वास्तविक लाभार्थियों की पहचान करने और फैसले को अमलीजामा पहनाने में कई महीने लगने की संभावना है। उस समय लाभान्वित होने वाले किसानों की संख्या काफी अलग हो सकती है।अब वर्ष 2008 में घोषित कृषि ऋण माफी योजना को ही लीजिए। केंद्र सरकार की तरफ से इस आशय का ऐलान फरवरी महीने में किया गया था लेकिन केंद्रीय मंत्रिमंडल ने उस पर अपनी मुहर मई महीने में लगाई थी और सात महीने बाद दिसंबर में पहला कर्ज माफ हो पाया था। उस पूरी ऋण माफी योजना को पूरा होने में करीब ढाई साल का लंबा वक्त लग गया था। अंतिम आंकड़ों से पता चला कि वास्तविक तौर पर जो कर्ज राशि माफ हुई वह घोषित रकम से 19,000 करोड़ रुपये यानी करीब 27 फीसदी कम थी।

लेकिन कर्ज माफी के फैसले पर अमल में यह देरी प्रभावित किसानों को असरदार राहत दे पाने में बड़ी बाधा पैदा करती है। किसानों को अभी तक पता ही नहीं है कि उनका कितना कर्ज इस फैसले के चलते माफ हो जाएगा। इसके चलते बैंकों का कर्ज लौटाने संबंधी उनकी आदतों पर भी असर पड़ता है। इससे परेशान होकर बैंक उन इलाकों में कर्ज देने में आनाकानी करने लगते हैं। इस साल अप्रैल और मई महीने में ही सरकारी बैंकों से आवंटित कृषि ऋण में क्रमश: एक और सात फीसदी की गिरावट आई है। यह पिछले एक दशक में अप्रैल-मई के दौरान कृषि ऋण आवंटन का सबसे कम स्तर है।तेलंगाना और आंध्र प्रदेश ने तीन साल पहले जब अपने किसानों का कर्ज माफ किया था, तब भी कृषि ऋण की वृद्धि प्रभावित हुई थी। प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को ऋण आवंटन के मामले में भी लक्ष्य हासिल कर पाना मुश्किल हो सकता है क्योंकि ये लक्ष्य पिछले वित्त वर्ष के आंकड़ों के आधार पर तय होते हैं। पिछले साल संस्थागत ऋण वृद्धि केवल 5 फीसदी रही थी। इन अर्थव्यवस्थाओं में नया फंड डालने की रफ्तार धीमी होने से समग्र आर्थिक गतिविधियों पर भी असर पड़ता है, न कि उपभोग मांग में तेजी आती है।हमारा अनुमान है कि कुल

बकाया कृषि ऋण करीब 15 लाख करोड़ रुपये है। इसमें सरकारी बैंकों के अलावा ग्रामीण सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों से लिए गए कृषि ऋण भी शामिल हैं। इसमें से 10 लाख करोड़ रुपये से थोड़ा ही कम ऋण उन सात राज्यों का है जहां पर किसानों का कर्ज माफ करने का ऐलान किया गया है या जहां इस मुद्दे को जोरशोर से उठाया जा रहा है। अगर हरेक प्रभावित राज्य उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र के ही अनुपात (सरकारी बैंकों से जारी किसान कर्ज का 30 फीसदी हिस्सा) में कृषि ऋण माफ करते हैं तो 2.1 लाख करोड़ रुपये का ऋण ही माफ होगा। पंजाब और कर्नाटक ने किसान कर्ज माफी का जो ऐलान किया है उसमें तो यह अनुपात केवल 16 फीसदी और 9 फीसदी है। इससे पता चलता है कि वास्तविक ऋण माफी के 1.2 लाख करोड़ रुपये से लेकर 1.5 लाख करोड़ रुपये के बीच में ही रहने के आसार हैं।कर्ज माफी फैसले के क्रियान्वयन की जटिलताओं के साथ ही फंड के प्रबंधन की समस्या भी राज्य सरकारों को यह मसला कई वर्षों तक खींचने के लिए बाध्य कर सकती है। तेलंगाना, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु पहले से ही ऐसा रवैया अपनाए हुए हैं और पंजाब भी उसी राह पर चलता हुआ नजर आ रहा है। विश्लेषण में शामिल कुछ राज्य कर्ज माफी का आगे चलकर ऐलान कर सकते हैं। अगर इन फैसलों को अगले चार-पांच वर्षों में क्रियान्वित किया जाता है तो कर्ज माफी का सालाना असर 30,000 करोड़ से लेकर 35,000 करोड़ रुपये तक ही होगा। यह भारतीय जीडीपी का महज 0.2 फीसदी हिस्सा ही होगा जो बॉन्ड बाजार के नजरिये से अधिक चिंता का विषय नहीं होना चाहिए।

नवदुनिया

Date: 13-07-17

चीन के बरक्स खड़ी हो चौकड़ी

हर्ष वी पंत (लेखक लंदन स्थित किंग्स कॉलेज में अंतरराष्ट्रीय संबंधों के प्राध्यापक हैं)

भारत-चीन-भूटान सीमा पर डोकलाम इलाके में चीन द्वारा सड़क निर्माण संबंधी गतिविधियों पर भारतीय और चीनी सैन्य बलों में लगातार तनातनी बढ़ने की खबरों के बीच एक खबर यह भी है कि जापानी और अमेरिकी नौसेना भारत के साथ संयुक्त सैन्य-अभ्यास कर रही हैं। तीनों देशों की नौसेनाएं मालाबार श्रृंाृंखला के अभ्यास के लिए करीब दस दिनों तक एक-दूसरे के साथ ताल मिलाएंगी। इस तरह के संयुक्त सैन्य-अभ्यास की शुरुआत 2007 में हुई थी। पहले यह अमेरिका और भारत के बीच ही हुआ करता था, लेकिन 2014 से जापान भी इसमें शामिल हो गया। इस साल के मालाबार नौसैनिक अभ्यास में ऑस्ट्रेलिया ने भी बतौर पर्यवेक्षक शामिल होने की गुजारिश की थी, लेकिन भारत ने उसे खारिज कर दिया।हिंद-प्रशांत क्षेत्र में बदलता शक्ति संतुलन एक तरह से अमेरिका के घटते रसूख और चीन की लगातार बढ़ती ताकत को ही दर्शाता है। अधिकांश एशियाई देशों के लिए इसके व्यापक निहितार्थ हैं। हालांकि अंतरराष्ट्रीय नीतियों, मानकों व संस्थाओं के भविष्य को लेकर पसरी अनिश्चितता अंतरराष्ट्रीय समुदाय के सभी सदस्य देशों पर असर डालती है, लेकिन एशियाई देश इस तरह के बदलाव से कुछ ज्यादा ही प्रभ्ंाावित होते हैं। एशियाई देशों के लिए शक्ति-संतुलन में आ रहा मौजूदा बदलाव अंतरराष्ट्रीय राजनीति की प्रकृति और

स्वरूप को लेकर महज वैचारिक संघर्ष ही नहीं है, बल्कि यह कई मायनों में उनकी अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा संबंधी प्रतिबद्धताओं से भी जुड़ा है। भारत, जापान और ऑस्ट्रेलिया हिंद-प्रशांत क्षेत्र में इस सामरिक बदलाव के केंद्र में हैं।

दिल्ली और टोक्यो के बीच इस सामरिक जुड़ाव की जड़ें 2014 में तलाशी जा सकती हैं, जब भारत ने प्रशांत महासागर में अमेरिका नौसेना के साथ सालाना मालाबार नौसैनिक अभ्यास में शामिल होने के लिए जापानी नौसेना को भी आमंत्रित किया। इससे भारत-अमेरिका-जापान की त्रिपक्षीय अभ्यास की पुरानी परंपरा फिर शुरू हुई। इससे पहले सितंबर 2007 में बंगाल की खाड़ी में भारत, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, सिंगापुर और जापान की नौसेनाओं के संयुक्त अभ्यास पर चीन द्वारा आंखें तरेरने के बाद भारत के सुर नरम पड़ गए थे। चीन द्वारा इस पर नाखुशी जाहिर करने के बाद भारत ने 2008 से ऐसे अभ्यास से खुद को अलग कर लिया था।मोदी सरकार के आने के बाद मालाबार नौसैनिक अभ्यास में जापान की भागीदारी को भी सुनिश्चित किया गया। जापान और अमेरिका ने बार-बार अपनी यह इच्छा दर्शाई है कि वे मालाबार नौसैनिक अभ्यास का दायरा बढ़ाना चाहते हैं। सितंबर, 2014 में मोदी और शिंजो आबे ने जिस विजन डॉक्यूमेंट यानी दृष्टिपत्र पर हस्ताक्षर किए थे, उसमें दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय नौसैनिक अभ्यास को नियमित बनाने के साथ ही भारत में जापान की भागीदारी को बढ़ाने की बात शामिल थी। इसके बाद जून, 2015 में होनोलुलु में हुई तीनों देशों की त्रिपक्षीय वार्ता के सातवें दौर के बाद मालाबार अभ्यास में टोक्यो के शामिल होने पर सहमति बनी।

भारत और जापान ने अमेरिका के साथ त्रिपक्षीय सामरिक संवाद साझेदारी की जो पहल की, उसके तहत एशिया-प्रशांत क्षेत्र में शक्ति-संतुलन कायम रखने के साथ-साथ हिंद-प्रशांत क्षेत्र में नौसैनिक सुरक्षा भी एक अहम पहलू है। अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के बीच भी ऐसा ही एक संवाद कायम है। मोदी के सत्ता संभालने के बाद एशिया में सुरक्षा के मोर्चे पर ऐसी तिकड़ी में न केवल नई जान आई है, बल्कि इसमें अन्य क्षेत्रीय ताकतों को भी शामिल करने के लिए इसे विस्तार भी दिया जा रहा है। इसी सिलसिले में जून, 2015 में भारत, ऑस्ट्रेलिया और जापान के बीच नई दिल्ली में पहली उच्चस्तरीय बैठक हुई। इन त्रिपक्षीय पहलकदमियों में एशिया- प्रशांत क्षेत्र में सक्षम लोकतांत्रिक देशों की एक 'चौकड़ीके रूप में विकसित होने की पूरी क्षमता है। इस संभावित साझेदारी की जड़ें 2004 के अंत के उस अभियान में तलाशी जा सकती हैं, जब हिंद महासागर क्षेत्र में आई प्रलयंकारी सुनामी के बाद राहत व बचाव अभियान में भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया की नौसेनाओं ने कंधे के कंधा मिलाकर काम किया था।

खासकर जापान ऐसी किसी भी साझेदारी का सबसे मुखर पैरोकार रहा है। 2007 में बतौर प्रधानमंत्री शिंजो आबे ने एशिया के लोकतांत्रिक देशों से साथ आने का आह्वान किया था। अमेरिका ने भी पूरे जोशोखरोश से इसका समर्थन किया था। इस पहल की परिणति यह हुई कि सितंबर, 2007 में पांच देशों की नौसेना ने बंगाल की खाड़ी में संयुक्त अभ्यास को अंजाम दिया, जिसका कोडनेम था - मालाबार 07-02। हालांकि ऐसी लामबंदी पर खिसियाए चीन ने नई दिल्ली और कैनबरा के समक्ष आपत्ति जाहिर की थी। इस पर भारत और ऑस्ट्रेलिया ने सोचा कि चीन को उकसाने में कोई समझदारी नहीं और वे इससे पीछे हट गए, जिससे यह पहल ही पटरी से उतर गई। अब जब चीन इस क्षेत्र में और ज्यादा आक्रामक होता जा रहा है, तब ऐसे संकेत हैं कि ऑस्ट्रेलिया को यह विचार फिर से लुभा सकता है।हिंद-प्रशांत क्षेत्र में नौवहन की आजादी और सामुद्रिक सुरक्षा के मोर्चे पर चीन की आक्रामकता को लेकर भारत व ऑस्ट्रेलिया चिंतित हैं। इन साझा चिंताओं ने दोनों देशों के बीच व्यापक नौसैन्य सहयोग की जरूरत को बल दिया और उन्होंने संयुक्त नौसैन्य अभ्यास शुरू भी कर दिया। मोदी के ऑस्ट्रेलिया दौरे के दौरान एक सुरक्षा संबंधी समझौते पर हस्ताक्षर हुए, जो हिंद महासागर क्षेत्र में रक्षा सहयोग की अहमियत को और अधिक रेखांकित करता है।भारत व ऑस्ट्रेलिया हिंद महासागर क्षेत्र की अग्रणी ताकते हैं। दोनों देश हिंद महासागर के तटवर्ती देशों के पूर्व संगठन हिंद महासागर क्षेत्रीय संघ यानी आईओआरए में भी साथ रह चुके हैं। इसके साथ ही ऑस्ट्रेलिया हिंद महासागर क्षेत्र में ओशन नेवल सिंपोजियम का भी स्थायी सदस्य है जो हिंद महासागर क्षेत्र की स्थानीय नौसेनाओं को साथ लाता है। हिंद महासागर क्षेत्र में उनके क्षेत्रीय सहयोग के दायरे को जापान और इंडोनेशिया जैसे देशों के साथ उनकी सालाना त्रिपक्षीय वार्ताओं से भी समझा जा सकता है।इस वक्त की जरूरत यही है कि समान

सोच वाले देश अपनी सहभागिता और बढ़ाएं। अमेरिका और जापान के साथ ही ऑस्ट्रेलिया भी मालाबार नौसैनिक अभ्यास में शामिल होने के लिए ललल रहा है। भारत को ऑस्ट्रेलिया के इस अनुरोध पर उदारतापूर्वक विचार करना चाहिए। बेहतर यही है कि हिंद-प्रशांत क्षेत्र में लोकतांत्रिक देशों की चौकड़ी का यह विचार जल्द से जल्द परवान चढ़े।

Date: 13-07-17

पुलिस को और तेजी से हाईटेक बनाना ही होगा

वरुण कपूर
varunkapoor170@gmail.com

बदलते समय के साथ-साथ आभासी दुनिया (वर्चुअल वर्ल्ड) का प्रभाव असली दुनिया में बढ़ता जा रहा है। नित नई टेक्नालॉजी का आविष्कार, हर दिन नए गैजेट्स का निर्माण, इंटरनेट का दायरा तेजी से बढ़ना, सोशल मीडिया का निरंतर विस्तार आदि के कारण अब दुनिया वैसी नहीं रही, जैसी पहले थी।

इस बदलाव के चलते अपराध जगत और उस पर नियंत्रण के तरीकों में भी काफी बदलाव आया है। आज के युग में सुरक्षा उपायों में टेक्नालॉजी व उपकरणों का महत्व तेजी से बढ़ रहा है। ऐसे में इनका उपयोग जन-सुरक्षा में करना क्रांतिकारी कदम है। अच्छा यह है कि मध्य प्रदेश व छत्तीसगढ़ का पुलिस विभाग इस दिशा में तेजी से काम कर रहा है। चूंकि अपराधों की प्रकृति बदल रही है इसलिए टेक्नालॉजी की ज्यादा से ज्यादा मदद लेने के अलावा कोई विकल्प भी नहीं। पुलिस द्वारा तकनीक, नए उपकरणों और सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करना अत्यंत जरूरी है।

हाल ही में पेशी के लिए गुजरात ले जाए गए अपराधियों द्वारा अपने साथियों की मदद से पुलिस टीम पर हमला कर भाग जाने की घटना से यह सबक लिया जा सकता है कि तकनीक किस तरह बहुत आसानी से ऐसी घटनाओं को टाल सकती है। यदि अपराधियों को पेशी पर एक से दूसरे शहर ले जाने के बजाय जेल या लॉक-अप से ही वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के जरिए सीधे कोर्ट रूम में पेश कर दिया जाए तो उनकी गवाही भी होगी और असुरक्षा का प्रश्न भी खड़ा नहीं होगा। इससे सरकार का लाखों रुपए प्रतिदिन का खर्च भी बचेगा, जो अपराधियों की पेशी, उनकी सुरक्षा व उनके साथ भेजी जाने वाली पुलिस टीम पर होता है।

बहरहाल, पुलिस विभाग ऐसी कई तकनीकों पर काम कर रहा है। अब सीसीटीवी पुलिस के लिए किसी हथियार से ज्यादा मददगार है। जीआईएस मैपिंग से संवेदनशील स्थान अब तक के सबसे बेहतर ढंग से चिह्नित किए जा रहे हैं, जीपीएस उपकरणों के उपयोग से अपराधियों और उनके अड्डों तक पहुंच तो आसान हुई ही है, चोरी गए वाहनों को भी पकड़ने में भी यह तकनीक जबरदस्त कारगर साबित हुई है। इनके अलावा सीडीआर एनालिसिस कर अपराधों को सुलझाना, ई-मेल ट्रेसिंग कर वांछित की लोकेशन ढूंढना, कई प्रकार के सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल कर आपराधिक डेटा का परीक्षण करना, सीसीटीएनएस व अन्य संचार माध्यमों से पुलिस इकाइयों में त्वरित संपर्क स्थापित करना इत्यादि शामिल हैं।

इसके बाद भी इस क्षेत्र में और सुदृढ़ कार्यवाही की निरंतर आवश्यकता है। पुलिस विभाग के तकनीकी उन्नयन के प्रयासों को और तेज करना होगा। इसके लिए अतिरिक्त वित्तीय प्रबंधन की जरूरत होगी, लेकिन इस पर होने वाला खर्च इनसे मिलने वाले परिणाम के मुकाबले बहुत कम साबित होगा।

(लेखक सीनियर आईपीएस हैं)

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date: 12-07-17

Malabar signals

India's participation in naval exercises in Indian Ocean Region reiterates its commitment to safeguard its maritime interests.

By: Editorial

As tensions with China remain unabated on the Sikkim border, India, Japan and the US began the annual maritime exercise, Malabar, in the Bay of Bengal on Monday. This is the Indian Navy's biggest ever participation in the exercise: Nine warships, including aircraft carrier, INS Vikramaditya, and a Kilo-class submarine, along with Long Range Maritime Patrol Aircraft P8I. The US Navy has a matching participation — the aircraft carrier USS Nimitz, USS Princeton, destroyers USS Kidd, Howard and Shoup, an attack submarine and one Long Range Maritime Patrol Aircraft P8A — while the Japanese brought in JS Izumo, a helicopter carrier, and the missile destroyer, JS Sazanami.

But it is not merely about the numbers. It is also about the naval platforms being fielded for the exercise. India has never fielded the P8I and INS Vikramaditya in any exercise; in fact, the US Navy had requested for the Russian-built aircraft carrier's participation last year but it was declined by the Indian side. A handful of navies operate aircraft carriers globally — China is still learning the ropes of operating an aircraft carrier — and for India to do joint training with the US using its sole aircraft carrier signifies a greater degree of cooperation and confidence in the bilateral relationship. The P8I aircraft is a variation of the American P8A aircraft and the Indian side will only learn from the Americans. It will bring out that India is unable to optimally utilise the asset, which is bound to reopen the debate over India signing the two pending foundational agreements with the US.

As the three navies exercise in the Indian waters, the elephant in the room — or the dragon in the sea — is China. The Chinese have already issued a statement about their exercise and their intelligence gathering ship, Haiwingxing, had entered the area earlier this month, to keep track. It had responded very strongly in 2007 when five countries had participated in Malabar. This time, Australia was keen to be a participant but Indians vetoed the proposal because of its earlier acquiescence towards China. India, however, would be hoping that China will get the message, that its forays in the Indian Ocean Region (IOR) won't go uncontested. China has been flexing its muscle in the IOR and the Indian Navy has been stretched in trying to monitor the increased Chinese movement. A successful Malabar would further drive home the Indian commitment to safeguard its maritime interests.

जनसत्ता

Date: 12-07-17

मालाबार के मायने

संपादकीय

अमेरिका, भारत और जापान की नौसेनाओं का सोमवार को शुरू हुआ साझा अभ्यास इस बार ज्यादा दिलचस्पी का विषय बना है, तो इसकी वजह जाहिर है। यह साझा सामरिक अभ्यास ऐसे वक्त हो रहा है, जब भारत और चीन के बीच, डोकलाम विवाद को लेकर तनातनी जारी है। गौरतलब है कि अभ्यास में हिस्सेदार तीनों देशों के साथ चीन के रिश्ते तनावपूर्ण चल रहे हैं। इसलिए किसी हद तक इस साझा अभ्यास को चीन को चुनौती के तौर पर देखा जाना स्वाभाविक है। पर इसका यह अर्थ नहीं कि अभ्यास का आयोजन चीन को चिढ़ाने या चेताने के मकसद से हुआ है। भारत और अमेरिका केसंयुक्त नौसैनिक अभ्यास की शुरुआत 1992 में ही हो गई थी, जब नरसिंह राव प्रधानमंत्री थे। कह सकते हैं कि आर्थिक उदारीकरण ही नहीं, सामरिक उदारीकरण की भी नींव राव ने डाली। 1998 से पहले बंगाल की खाड़ी में अमेरिका के साथ तीन साझा अभ्यास हुए थे।

भारत के परमाणु परीक्षण से नाराज अमेरिका ने आगे शामिल होने से मना कर दिया। लेकिन ग्यारह सितंबर 2001 के आतंकी हमले के बाद उसके रुख में बदलाव आया और मालाबार का क्रम फिर शुरू हुआ। हालांकि मालाबार अभ्यास की परिकल्पना में जापान को शुरू से ही शामिल किया गया था, पर स्थायी भागीदार के तौर पर वह 2015 में शामिल हुआ।इस इतिहास को देखते हुए डोकलाम से मालाबार के तार नहीं जोड़े जा सकते। यों भी साझा सैन्य अभ्यास काफी दिनों की तैयारी से ही आयोजित हो पाते हैं। इस बार भी कोई छह महीने पहले से तैयारी शुरू हो गई थी। जबकि डोकलाम विवाद कुछ ही दिनों पहले शुरू हुआ। भारतीय नौसेना के एक आला अधिकारी ने उद्घाटन के दिन कहा भी, कि मालाबार अभ्यास का डोकलाम विवाद से कोई लेना-देना नहीं है, न इसका मकसद चीन को ताकत दिखाना है। लेकिन पहली बार मालाबार अभ्यास इतने जोश-खरोश और इतनी तैयारी से हो रहा है। यह भी पहली बार है कि इसे लेकर चीन बेचैनी महसूस कर रहा है। साझा अभ्यास की गहनता का अंदाजा इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि अमेरिका, भारत और जापान, तीनों देशों ने अपने सबसे बड़े युद्धपोत इसमें शामिल किए हैं। अमेरिका एक लाख टन वजनी विमानवाहक पोत निमित्ज इसमें हिस्सा ले रहा है तो भारतीय विमानवाहक पोत आइएनएस विक्रमादित्य और जापानी सेना का सबसे बड़ा हेलिकॉप्टर वाहक युद्धपोत इजुमी भी इसमें शामिल हैं। तीनों देशों के बीस से ज्यादा युद्धपोत हिस्सा ले रहे हैं। चिकित्सा अभियान, खतरा न्यूनीकरण, विस्फोटक आयुध निपटान, हेलिकॉप्टर अभियान के अलावा, पहली बार पनडुब्बी-रोधी कार्रवाई का अभ्यास हो रहा है और इस पर खास जोर है।

यह सही है कि मालाबार को डोकलाम से जोड़ कर नहीं देखा जा सकता, क्योंकि मालाबार साझा अभ्यास काफी पहले से चला आ रहा है और यह उसका इक्कीसवां सत्र है। पर चीन के साथ भारत, अमेरिका और जापान, तीनों देशों की तनातनी ने इस साझा अभ्यास को एक नया रंग जरूर दे दिया है। इसका संदेश साफ है, हम साथ हैं। इस अभ्यास पर चीन की गहरी नजर है। खबर यह भी है कि मालाबार अभ्यास पर निगाह रखने के लिए उसने अपने टोही पोत भेजे हैं। अमेरिका के लिए यह एशिया में सुरक्षा-समीकरणों को अपने ढंग से प्रभावित करने का अवसर है, तो भारत के लिए दुनिया की सबसे ताकतवर नौसेना से बहुत कुछ सीखने तथा अपनी रणनीतिक तैयारी को और पुख्ता करने का।